॥ श्री महावीराय नमः ॥

॥ जय नानेश ॥ ॥ जय रामेश ॥

जैन संस्कार पाठ्यक्रम
भाग – 1

प्रकाशक
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
बीकानेर

जैन संस्कार पाठ्यक्रम भाग - 1
तेरहवां संस्करण–जुलाई, 2016

प्रतियाँ – 8000
मूल्य - रुपए 5/–

अर्थ सौजन्य :–

- **श्रीमती मंगलीदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री झूमरमलजी छल्लाणी**
  असावरी/नई दिल्ली

पुस्तक एवं परीक्षा फार्म प्राप्ति स्थल

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग, नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर (राज.)
फोन-0151-3292177, 2270261

आचार्य श्री नानेश ध्यान केन्द्र
पद्मिनी मार्ग राणा प्रताप नगर रोड़ , उदयपुर (राज.)
फोन-0294-2490306, 2490717

प्रकाशक
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग, नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर (राज.)
फोन-0151-3292177, 2270261

मुद्रक
चौधरी ऑफसेट प्राईवेट लिमिटेड
फोन :– 0294–2584071, 2485784

भूमिका

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ द्वारा अनेक धार्मिक एवं सामाजिक गतिविधियाँ चलाई जा रही हैं, जिनमें 'धार्मिक परीक्षा बोर्ड' भी एक है, सन् 1974 से ये परीक्षाएँ निरन्तर चल रही हैं जिसके माध्यम से ज्ञानार्जन करने वालों के लिए पाठ्यक्रम निर्धारित कर परीक्षाएँ ली जाती रही हैं। विभिन्न प्रसंगों पर परमागम रहस्यज्ञाता, व्यसनमुक्ति प्रणेता 1008 श्रद्धेय गुरुवर आचार्य श्री रामलालजी म.सा. से तत्त्व चर्चा का अवसर प्राप्त होता रहा है। तत्त्व चर्चा के दौरान बदलते परिवेश के अनुरूप नए पाठ्यक्रम की आवश्यकता अनुभूत हुई।

अतएव जैन संस्कार पाठ्यक्रम के नाम से नवीन पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया है जिसमें भाग1 से 12 तक प्रस्तुत किए गए हैं, जो वर्ष 2003 से निरन्तर गतिमान है। इससे जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त होगा तथा विशेष ज्ञानार्जन प्राप्त कर जीवन में कुछ पा सकेंगे, ऐसा विश्वास है। पाठ्यक्रम को सुरुचिपूर्ण एवं सुबोध बनाने के लिए साहित्य की विविध विधाओं से सम्पन्न बनाया गया है। इसमें 2011 तक के संशोधनों को समाहित किया गया है।

पाठ्यक्रम के संकलन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से जिनका भी मार्गदर्शन एवं सहयोग मिला, उनके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं।

सभी श्री संघों एवं चातुर्मासिक क्षेत्रों के धर्मानुरागी भाई-बहिनों से अनुरोध है कि अधिक-से-अधिक इन परीक्षाओं में भाग लेकर ज्ञान की श्रीवृद्धि में योगदान देवें। इसी शुभेच्छा के साथ।

विनीत

संयोजक - धार्मिक परीक्षा बोर्ड

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

बीकानेर

परीक्षा के नियम

परीक्षा में भाग लेने वाले विद्यार्थियों को फार्म भरना आवश्यक है कम से कम दस परीक्षार्थी होने पर वहाँ परीक्षा केन्द्र खोला जा सकेगा।

1. पाठ्यक्रम — भाग 1 से 12 तक
2. योग्यता — ज्ञानार्जन का अभिलाषी
3. परीक्षा का समय — माह आसोज, बदी पक्ष
4. श्रेणी निर्धारण

   प्रथम श्रेणी — 75 % से अधिक

   द्वितीय श्रेणी — 50 % से 75 %
5. परीक्षा फल — परीक्षा फल का प्रकाशन श्रमणोपासक पत्रिका में तथा परीक्षा केन्द्रों पर उपलब्ध रहेगा।
6. प्रमाण–पत्र — सम्बन्धित परीक्षा केन्द्रों पर प्रमाण–पत्र भिजवायें जाएंगे।
7. पारितोषिक — प्रत्येक परीक्षा में प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा अन्य प्रोत्साहन पुरस्कार।

   — 18 वर्ष से कम उम्र के विद्यार्थियों के लिए 71% से 100 % प्रथम श्रेणी।

   35 % से 70 % द्वितीय श्रेणी।

परीक्षार्थी ध्यान देवें।

यह धार्मिक परीक्षा ज्ञानार्जन एवं जीवन विकास हेतु है। इसमें नकल करना अथवा पुस्तक आदि देखकर लिखना या पूछकर उत्तर लिखना नियम विरुद्ध है। परीक्षा निरीक्षक अनुशासनात्मक कार्यवाही हेतु अधिकृत है।

अनुक्रम

क्रं.	विषय	पृष्ठ संख्या	अंक 100
I	**सूत्र विभाग**		**35**
	1. सामायिक सूत्र	6	
	2. सामायिक लेने की विधि	9	
	3. सामायिक पारने की विधि	11	
	4. सामायिक में वर्जनीय बत्तीस दोष	11	
II	**तत्त्व विभाग**		**25**
	1. चौबीस तीर्थंकर	14	
	2. सोलह सतियाँ	14	
	3. दस श्रावकों के नाम	15	
	4. श्रावक का वचन व्यवहार	15	
	5. 'नहीं' के बोल	16	
	6. 'मूल' के बोल	16	
	7. नव तत्त्व	16	
	8. काम की बातें	17	
III	**कथा विभाग**		**10**
	1. श्रमण निर्ग्रन्थ महावीर	18	
	2. राजा मेघरथ	22	
	3. अल्प-परिग्रही पूणिया श्रावक	23	
IV	**काव्य विभाग**		**15**
	1. मेरी भावना	26	
	2. महामन्त्र नवकार प्रार्थना	27	
	3. श्री महावीर स्वामी की सदा जय हो	28	
	4. अच्छा बच्चा	29	
	5. वीर वन्दना	29	
V	**सामान्य ज्ञान विभाग**		**15**
	1. श्रावक के तीन मनोरथ	30	
	2. धर्म स्थान में प्रवेश के नियम	30	
	3. श्रावक के 14 नियम	31	
	4. सुभाषित	31	
	5. सामायिक का महत्व	32	
	6. परीक्षा प्रश्न पत्र	33	

सूत्र विभाग

सामायिक सूत्र

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं।
णमो सिद्धाणं।
णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं।
णमो लोए सव्वसाहूणं।
एसो पंचणमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥1॥

(श्री कल्पसूत्र मंगलाचरण)

गुरु वन्दन सूत्र– (तिक्खुत्तो का पाठ)

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेमि वंदामि णमंसामि (णमन् सामि) सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण वन्दामि।

(श्रीमद् रायप्पसेणी सूत्र 8)

इरियावहिया सूत्र (आलोचना सूत्र, इच्छाकारेणं का पाठ)

इच्छाकारेणं संदिसह, भगवं ! इरिया–वहियं पडिक्कमामि इच्छं इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडा संताणा संकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

(हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 572)

उत्तरीकरण–सूत्र (तस्स उत्तरी का पाठ)

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्ली करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं। अण्णत्थ

ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाईएणं, उडडुएणं वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्त–मुच्छाए, सुहुमेहिं अंग संचालेहिं, सुहुमेहिं खेल संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठि–संचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो जाव अरिहंताणं भगवंताणं णमोक्कारेणं न पारेमि ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि। (हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 778)

चतुर्विंशतिस्तव सूत्र (लोगस्स का पाठ)

लोगस्सुज्जोयगरे*, धम्म–तित्थयरे जिणे ।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥1॥

उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥2॥

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीयल–सिज्जंस–वासुपुज्जं च ।
विमल–मणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥3॥

कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥4॥

एवं मए–अभिथुआ, विहुय–रयमला पहीण–जर–मरणा।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयन्तु ॥5॥

कित्तिय–वंदिय–महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरुग्गबोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिन्तु ॥6॥

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागरवरगंभीरा, सिद्धासिद्धिं मम दिसंतु ॥7॥

(हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 493-509)

कायोत्सर्ग शुद्धि का पाठ

कायोत्सर्ग (काउस्सग्ग) में आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान शुक्लध्यान न ध्याया हो, कायोत्सर्ग में मन, वचन, काया के योग चलित हुए हों तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

(हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 454)

प्रतिज्ञा सूत्र (करेमि भंते का पाठ)

करेमि भंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव–नियमं (जितनी

* प्राचीन प्रतियों के अनुसार लोगस्सुज्जोयगरे प्रामाणिक है।

सामायिक लेनी हो उनकी गिनती प्रकट कहकर आगे पाठ बोलना चाहिए)
पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

प्रणिपात सूत्र (शक्रस्तव, णमोत्थु णं का पाठ)

णमोत्थु णं अरिहंताणं, भगवंताणं, आइगराणं, तित्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवर-पुंडरीयाणं, पुरिस-वर-गंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं, लोगहिआणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं, अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर-चाउरन्त-चक्क-वट्टीणं, दीवो ताणं सरणं* गई-पइट्ठा, अप्पडि-हय-वर-नाण-दंसण-धराणं विअट्ट-छउ-माणं जिणाणं जावयाणं, तिण्णाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वन्नूणं सव्व-दरिसीणं सिव-मयल-मरुअ-मणन्त-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणरावित्ति-सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं संपत्ताणं, णमो जिणाणं जिअभयाणं।

(श्रीमद् औपपातिक सूत्र 12, कल्पसूत्र शक्रस्तव)

नोट : (-) इस चिन्ह वाले स्थान पर थोड़ा विराम लेकर आगे के पाठ का उच्चारण करना चाहिये।

धर्मगुरु धर्माचार्य का स्तुति पाठ 卐

णमोत्थु णं रामस्स गणिवरस्स• मम धम्मायरियस्स धम्मोवएसगस्स।

सामायिक पारने का पाठ (एयस्स नवमस्स का पाठ)

एयस्स नवमस्स, सामाइय-वयस्स, पंच अइयारा, जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं-मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

(हरिभद्रीयावश्यक पृष्ठ 831)

---

* प्राचीन प्रतियों के अनुसार सरणं शब्द ही शुद्ध है ।

卐 रायपसेणियं आदि अनेक आगमों में क्वचित् सिद्धों व अरिहंतों को नमस्कार के पश्चात अपने धर्माचार्य को नमस्कार करने का उल्लेख प्राप्त होता है। दो णमोत्थु णं के पश्चात् श्रावक-श्राविकाओं के द्वारा भी अपने धर्माचार्य की स्तुति करना आगमिक विधि है। अतः सर्वत्र दो णमोत्थु णं के पश्चात् 'धर्मगुरु धर्माचार्य का स्तुति पाठ' उच्चारणीय होने के कारण इस पाठ का संयोजन किया गया है।

• अपने - अपने धर्म गुरु का नाम लिया जा सकता है।

सामाइयं सम्मं काएणं न फासियं न पालियं न तीरियं न किट्टियं न सोहियं न आराहियं, आणाए अणुपालियं ण भवइ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक में दस मन के, दस वचन के, बारह काया के, इन कुल बत्तीस दोषों में से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक में स्त्री–कथा,(महिलाएँ पुरुष कथा कहे) भत्त कथा (भोजन–कथा), देश–कथा, राज कथा, इन चार कथाओं में से कोई कथा की हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक में आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा इन चार संज्ञाओं में से कोई संज्ञा की हो, तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, जानते–अजानते मन, वचन, काया से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक व्रत विधि से लिया, विधि से पूर्ण किया, विधि में कोई अविधि हुई हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक का पाठ बोलने में काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, न्यूनाधिक, विपरीत पढ़ने में आया हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान की साक्षी से तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

सामायिक लेने की विधि

1. **निस्सही निस्सही –** सामायिक स्थान (धर्म स्थान) में प्रवेश करते ही निस्सही निस्सही शब्द का उच्चारण करे अर्थात् मैं पाप कर्मों का निषेध करता हूँ।
2. **प्रतिलेखन –** स्थान पूँज कर, आसन, मुखवस्त्रिका, वस्त्र आदि धार्मिक उपकरणों का प्रतिलेखन करें एवं आसन बिछाऐ।
3. **वस्त्र परिवर्तन–** भाइयों के लिए चोलपट्टा या धोती एवं चादर (चोलपट्टे की लम्बाई पैर के टखने तक रहे) तथा मुँहपत्ति धारण करें एवं महिलाएं सादे वस्त्र पहनें एवं मुँहपत्ति लगावे।
4. **वन्दन–** तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार विधि सहित वन्दना। (सन्त सतियाँजी म.सा. विराजमान हो तो उनकी ओर मुँह करके और न हो तो उत्तर या पूर्व दिशा में मुँह करके वन्दनीय के दाहिने कान से बायें कान की तरफ अर्थात् अपने बायें से दायें कान की ओर तीन बार प्रदक्षिणा करे)

5. **नमस्कार महामन्त्र, इच्छाकारेणं, तस्स उत्तरी का पाठ** (तस्स उत्तरी का पाठ बोलते समय ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं तक का पाठ उच्चारण पूर्वक बोले फिर अप्पाणं वोसिरामि शब्द मन में बोलना)

6. **कायोत्सर्ग–** शरीर की चंचलता रहित होकर एक लोगस्स का कायोत्सर्ग करे। 'नमो अरिहंताणं' बोल कर कायोत्सर्ग खोले।

कायोत्सर्ग करने की विधि

खड़े होकर कायोत्सर्ग करने की विधि :–

i) दोनों पैरों के अग्रभाग में चार अंगुल एवं पीछे के भाग में उससे कुछ कम अंतर रखते हुए घुटनों को बिना मोड़े सीधे खड़े रहना।

ii) आँखों को बंद करना या थोड़ी सी खुली रखकर नासिकाग्र पर टिकाना।

iii) गर्दन हल्की सी झुकी हुई रखना।

iv) हथेलियों को बिना तनाव के खुली रखते हुए हाथों को नीचे लटकाये रखना।

v) तस्स उत्तरी का पाठ बोलते हुए ध्यान की मुद्रा बनाना। 'अप्पाणं वोसिरामि' बोलने से पहले काया को स्थिर कर कायोत्सर्ग करना चाहिए।

बैठकर कायोत्सर्ग करने की विधि

सुखासन में बैठकर रीढ़ की हड्डी को सीधी रखकर नाभि के पास बाँयी हथेली पर दाँयी हथेली (Right Palm on the left palm) रखकर कायोत्सर्ग करना चाहिए।

नोट :– पुरुषों को खड़े होकर ही ध्यान करना चाहिए। शारीरिक अनुकूलता न होने आदि कारणों से जो खड़े-खड़े ध्यान न कर सकें तो वे बैठ कर भी कर सकते हैं। बहनों को बैठकर ही ध्यान करना चाहिए।

7. **नमस्कार मंत्र,** कायोत्सर्ग शुद्धि का पाठ एवं एक लोगस्स का पाठ बोलें।

8. **प्रत्याख्यान –** करेमि भन्ते के पाठ से सामायिक व्रत के प्रत्याख्यान। (साधु-साध्वी या बड़े श्रावक-श्राविका जो सामायिक में हैं, उनसे ग्रहण करें। न हो तो स्वयं लेवें।) यहाँ ध्यान रखने योग्य है कि यदि साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका विशेष ज्ञानार्जन-प्रवचन आदि में संलग्न हों तो

उन्हें अन्तराय न देते हुए स्वयं प्रत्याख्यान ले लेवें। करेमि भन्ते के पाठ में जहां 'जावनियमं' शब्द आवे उसके स्थान पर जितनी सामायिक लेना हो उतने मुहूर्त उपरान्त बोल कर आगे का पाठ पूर्ण करें।

9. **णमोत्थु णं (शक्रस्तव) देने की विधि-** आसन से नीचे बैठकर बायाँ घुटना ऊँचा कर, दोनों कुहनियों को पेट पर लगाकर, हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर, मस्तक पर दोनों हाथों को रखना चाहिए। विराम स्थल का ध्यान रखते हुए भाव सहित दो बार णमोत्थु णं का पाठ बोलना चाहिए दूसरे णमोत्थु णं में ठाणं संपताणं के स्थान पर 'ठाणं संपाविउकामाणं' कहना। दो णमोत्थु णं के बाद अपने धर्मगुरु धर्माचार्य का स्तुति पाठ कहें।
नोट – एक सामायिक का समय 48 मिनट (1 मुहूर्त) का होता है।

सामायिक पारने की विधि

1. नमस्कार महामन्त्र। इच्छाकारेणं, तस्सउत्तरी का पाठ (अप्पाणं वोसिरामि मन में कहना)।
2. दो लोगस्स का ध्यान करें, णमो अरिहंताणं कहकर पारना।
3. नमस्कार महामन्त्र, कायोत्सर्ग शुद्धि का पाठ बोलकर एक लोगस्स का पाठ प्रकट बोलना।
4. दो बार णमोत्थु णं व धर्मगुरु धर्माचार्य का स्तुति पाठ पूर्व विधि के अनुसार। सामायिक पारने का पाठ एयस्स नवमस्स बोलें एवं तीन बार नमस्कार मन्त्र बोलकर सामायिक पारना।

सामायिक में वर्जनीय बत्तीस दोष

मन के दस दोष

अविवेग–जसोकित्ती, लाभत्थी गव्व–भय नियाणत्थी।
संसय रोस अविणओ, अबहुमाण ए दोसा भणियव्वा।

1. विवेक बिना सामायिक करे तो **अविवेक दोष**।
2. यशकीर्ति के लिए सामायिक करे तो **यशोवांछा दोष**।
3. धन आदि के लाभार्थ सामायिक करे तो **लाभवांछा दोष**।
4. अहंकार युक्त सामायिक करे तो **गर्व दोष**।
5. राज्यादिक के अपराध के भय से सामायिक करे तो **भय दोष**।

6. सामायिक में नियाणा (निदान) करे तो **निदान दोष**।
7. फल में सन्देह रखकर सामायिक करे तो **संशय दोष**।
8. सामायिक में क्रोध, मान, माया, लोभ करे तो **रोष दोष**।
9. विनयपूर्वक सामायिक न करे तथा सामायिक में देव, गुरु, धर्म की अविनय अशातना करे तो **अविनय दोष**।
10. बहुमान भक्तिभावपूर्वक सामायिक न करके बेगारी की तरह सामायिक करे तो **अबहुमान दोष**।

वचन के दस दोष

कुवयण सहसाकार, सच्छंद संखेव कलहं च।
विगहा वि हासोऽसुद्धं, णिरवेक्खो मुणमुणा दोसा दस॥

1. बुरे वचन बोले तो **कुवचन दोष**।
2. बिना विचारे बोले तो **सहसाकार दोष**।
3. सामायिक में राग–द्वेष उत्पन्न करने वाले संसार संबंधी गीत आदि गाने गावे तो **स्वछन्द दोष**।
4. सामायिक के पाठ और वाक्यों को कम करके बोले तो **संक्षेप दोष**।
5. सामायिक में क्लेशकारी वचन बोले तो **कलह दोष**।
6. सामायिक में स्त्री-पुरुष कथा, भत्त (भोजन) कथा, देश कथा, राज कथा इन चार कथाओं में से कोई कथा करे तो **विकथा दोष**।
7. सामायिक में हँसी-मजाक करे तो **हास्य दोष**।
8. सामायिक में उतावलेपन से पाठ को अशुद्ध बोले अथवा अव्रती को आओ पधारे कहकर सत्कार–सम्मान देवे या उसे आने–जाने का कहे तो **अशुद्ध दोष**।
9. सामायिक में उपयोग बिना बोले तो **निरपेक्ष दोष**।
10. अस्पष्ट गुण–गुण (गुनगुनावे) तो **मुणमुण दोष**।

काया के बारह दोष

कुआसणं चलासणं चलदिट्ठी,
सावज्ज किरिया – लंबणा–कुंचण पसारणं।
आलस्स मोटन मल विमासणं,
निद्दा वेयावच्चत्ति बारस कायदोसा॥

1. सामायिक में अयोग्य, अभिमान आदि के आसन में बैठे तो **कुआसन**

दोष।

2. सामायिक में स्थिर आसन पर न बैठे तथा आसन बार–बार बदलता रहे तो **चलासन दोष।**
3. सामायिक में इधर–उधर दृष्टि फेरे तो **चलदृष्टि दोष।**
4. सामायिक में सावद्य क्रिया एवं गृह कार्य करे तो **सावद्य क्रिया दोष।**
5. सामायिक में बिना कारण दीवार आदि का सहारा लेवे तो **आलम्बन दोष।**
6. सामायिक में बिना कारण हाथ-पाँव फैलावे समेटे तो **आकुंचन–प्रसारण दोष।**
7. सामायिक में अंग मोड़े तो **आलस्य दोष।**
8. सामायिक में हाथ-पैर की अंगुलियों का कड़का निकाले तो **मोटन दोष।**
9. सामायिक में मैल उतारे तो **मल दोष।**
10. गले या गाल आदि पर हाथ लगाकर शोकासन में बैठे तो **विमासण दोष।**
11. सामायिक में निद्रा लेवे तो **निद्रा दोष।**
12. सामायिक में बिना कारण अव्रती की सेवा करे, अव्रती से सेवा कराये तथा बिना कारण व्रती से सेवा करावे तो **वैयावृत्य दोष।**

क्रोध को क्षमा से जीतो
मान को नम्रता से जीतो
माया को सरलता से जीतो
लोभ को संतोष से जीतो

तत्त्व विभाग

(1) 24 तीर्थंकर

इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकर हो चुके हैं। तीर्थ का अर्थ संघ है। साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका को संघ कहते हैं। जो तीर्थंकर होते हैं, वे इस चतुर्विध संघ की स्थापना करते हैं। वे सर्वज्ञ और सर्वदर्शी होते हैं। उनके चरणों में स्वर्ग के इन्द्र भी नमस्कार करते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं ।

1. श्री ऋषभदेवजी
2. श्री अजितनाथजी
3. श्री सम्भवनाथजी
4. श्री अभिनन्दनजी
5. श्री सुमतिनाथजी
6. श्री पद्मप्रभजी
7. श्री सुपार्श्वनाथजी
8. श्री चन्द्रप्रभजी
9. श्री सुविधिनाथजी
10. श्री शीतलनाथजी
11. श्री श्रेयांसनाथजी
12. श्री वासुपूज्यजी
13. श्री विमलनाथजी
14. श्री अनन्तनाथजी
15. श्री धर्मनाथजी
16. श्री शान्तिनाथजी
17. श्री कुन्थुनाथजी
18. श्री अरनाथजी
19. श्री मल्लिनाथजी
20. श्री मुनिसुव्रतजी
21. श्री नमिनाथजी
22. श्री नेमिनाथजी (अरिष्टनेमिजी)
23. श्री पार्श्वनाथजी
24. श्री महावीर स्वामीजी

नौवें तीर्थंकर श्री सुविधिनाथजी का दूसरा नाम श्री पुष्पदंतजी है। बाइसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथजी का दूसरा नाम श्री अरिष्टनेमिजी है। चौबीसवें तीर्थंकर भगवान श्री महावीर स्वामीजी के कई नाम हैं। उन्हें वीर, महावीर, अतिवीर, सन्मति और वर्द्धमान भी कहते हैं।

(2) सोलह सतियाँ

जो कष्ट आने पर भी अपने शील-धर्म को नहीं छोड़ती हैं, अपने पतिदेव के सिवाय दूसरे पुरुषों को पिता तथा भाई के समान समझती हैं, उसे सती कहते हैं। ऐसी सतियां कई हो गई हैं। परन्तु जिन सोलह सतियों को हम याद करते हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं-

1. श्री ब्राह्मीजी
2. श्री सुन्दरीजी
3. श्री दमयन्तीजी
4. श्री कौशल्याजी
5. श्री सीताजी
6. श्री कुन्तीजी
7. श्री द्रौपदीजी
8. श्री राजीमतीजी
9. श्री चन्दनबालाजी
10. श्री मृगावतीजी
11. श्री प्रभावतीजी
12. श्री सुभद्राजी
13. श्री चेलनाजी (पुष्पचूलाजी)
14. श्री सुलसाजी
15. श्री शिवादेवीजी
16. श्री पद्मावतीजी

इन सोलह सतियों में ब्राह्मीजी, सुन्दरीजी, चन्दनबालाजी और राजीमतीजी बाल-ब्रह्मचारिणी थीं और बाकी सब विवाहिता थीं। इन सब सतियों का जीवन-चरित्र पढ़ने से मालूम होगा, इन्होंने घोर कष्ट सहकर भी अपने धर्म की रक्षा की इसलिये ये जग की पूजनीय बन गईं। सुबह उठकर जो इनका नाम लेते हैं, उनका मन पवित्र होता है और उनका चरित्र-बल बढ़ता है।

(3) 10 श्रावकों के नाम

1. श्री आनंदजी
2. श्री कामदेवजी
3. श्री चुलणीपिताजी
4. श्री सुरादेवजी
5. श्री चुल्लशतकजी
6. श्री कुण्डकौलिकजी
7. श्री सकडालपुत्रजी
8. श्री महाशतकजी
9. श्री नन्दिनीपिताजी
10. श्री सालिहीपिताजी

(4) श्रावक का वचन व्यवहार

श्रमणोपासक का वचन व्यवहार उत्तम प्रकार का होता है, इसके आठ नियम इस प्रकार हैं -

1. श्रावकजी थोड़ा (कम) बोले।
2. श्रावकजी आवश्यकता होने पर बोले।
3. श्रावकजी मीठा बोले।
4. श्रावकजी चतुराईपूर्वक (अवसर के अनुसार) बोले।
5. श्रावकजी अहंकार रहित वचन बोले।
6. श्रावकजी मर्म खोलने वाले (आघात-जनक) वचन नहीं बोले।
7. श्रावकजी सूत्र सिद्धांत के अनुसार न्याययुक्त बोले।

8. श्रावकजी सभी जीवों के लिए हितकारी साताकारी वचन बोले।

(5) 'नहीं' के बोल

1. क्रोध के समान **विष** नहीं।
2. क्षमा के समान **अमृत** नहीं।
3. पाप के समान **वैरी** नहीं।
4. धर्म के समान **मित्र** नहीं।
5. कुशील के समान **भय** नहीं।
6. शील के समान **शरण नहीं ।**
7. लोभ के समान **दुख** नहीं।
8. संतोष के समान **सुख** नहीं।

(6) 'मूल' के बोल

जिससे वस्तु की तथा गुण या दोष की उत्पत्ति हो, उसे मूल कहते हैं। **मूल** के सिंचन से ही यथासमय फल की प्राप्ति होती है–

1. समस्त गुणों का मूल **विनय** है।
2. सभी दुःखों का मूल **मोह** है।
3. सभी पापों का मूल **लोभ** है।
4. सभी धर्मों का मूल **दया** है।
5. सभी कलह का मूल **हँसी** है।
6. सभी रोगों का मूल **अजीर्ण** है।
7. सभी प्रकार के जन्म मरण का मूल **कर्म** है।
8. सभी बन्धनों का मूल **स्नेह** है।

(7) नव तत्त्व

1. **जीव तत्त्व** – जो चेतना एवं उपयोग लक्षण वाला, सुख-दुःख का अनुभव करने वाला, आठ कर्मों का कर्ता, विकर्ता (विनाशक), शाश्वत, कभी नष्ट नहीं होने वाला और असंख्य प्रदेशी है उसे जीव कहते हैं। इसके मुख्य दो भेद हैं- 1. संसारी 2. सिद्ध।
2. **अजीव तत्त्व**– चेतना रहित जड़ पदार्थों को अजीव कहते हैं।
3. **पुण्य तत्त्व**– जो आत्मा को पवित्र करे और जिससे प्राणियों को सुख की प्राप्ति हो, उसे पुण्य कहते हैं।
4. **पाप तत्त्व** – जो आत्मा को मलिन करे, जिससे अशुभ कर्म बँधे और दुःख पूर्वक भोगा जाए, उसे पाप कहते हैं।
5. **आश्रव**– जिस प्रकार तालाब में नालों द्वारा पानी आता है, उसी प्रकार जिन कारणों से आत्मा में कर्म आते हैं उसे आश्रव कहते हैं।
6. **संवर**– आश्रव के कारणों को रोक देना संवर है। आश्रव से कर्म आते हैं

तो संवर से रुकते हैं। व्रत, प्रत्याख्यानादि द्वारा संवर किया जाता है।

7. **निर्जरा–** आत्मा पर लगे हुए कर्मों का एक देश से अलग होना निर्जरा है।

8. **बन्ध–** कषाय और योग के निमित्त से आत्मा के साथ कर्म पुद्गलों के मिलने को बन्ध कहते हैं।

9. **मोक्ष–** सम्पूर्ण कर्मों का आत्मा से अलग होना मोक्ष है। (आत्मा का सर्वथा कर्म रहित होकर जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त होना मोक्ष कहलाता है।)

(8) काम की बातें

1. रोज सुबह सूर्य निकलने से पहले उठो और भगवान् का भजन करो।
2. अपने माता-पिता तथा बड़ों को प्रणाम व आदर करो। उनका कहना मानों, उनकी सेवा करो।
3. बड़ों को सदा 'आप' कहो, 'तुम' नहीं ।
4. घर में कोई बड़ा तुम्हें बुलाए तो 'जी साहब' या 'हाँ साहब' कह कर बोलना चाहिए।
5. घर में भाई-बहिनों के साथ प्रेम से रहो। कोई भी खाने-पीने की वस्तु हो, सब बाँट कर खाओ। अकेले कभी न खाओ।
6. किसी दूसरे की वस्तु बिना पूछे मत लो। यह चोरी है और चोरी करना बड़ा पाप है। अगर कभी कोई गलती हो जाए तो साफ-साफ कह दो, छिपाओ नहीं।
7. गाली या भद्दे शब्द बोलना जंगलीपन है, इसलिए कभी किसी को बुरे शब्द मत कहो।
8. बड़ों के सामने सदा नम्र होकर बैठो।
9. सच्चे मन से भगवान् की भक्ति करो। उनके नाम एवं गुणों की रोज माला फेरो, भजन गाओ। इन कार्यों से मन साफ होता है। उसमें अच्छे विचार आते हैं एवं अच्छे विचारों से अच्छे कार्य होते हैं। इससे संसार में मान-सम्मान प्राप्त होता है।
10. सदा निर्भय रहो। मन में भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि किसी तरह का भय न रखो। इनमें ऐसी कोई ताकत नहीं है, जो तुम्हें दुःख दे सके। नमस्कार मंत्र के जाप से सर्व भय दूर होते हैं।

कथा विभाग

(1) श्रमण निर्ग्रन्थ महावीर

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन भगवान महावीर का जन्म क्षत्रियकुण्ड नगर में हुआ। महावीर की माता महारानी त्रिशला एवं पिता महाराजा सिद्धार्थ थे। महावीर के प्रमुख नाम वर्द्धमान, महावीर, सन्मति, श्रमण आदि थे। महावीर के बड़े भाई का नाम नन्दिवर्धन एवं बहिन सुदर्शना थी। काश्यप गोत्रीय वर्द्धमान का विवाह यशोदा से हुआ। महावीर की पुत्री का नाम प्रियदर्शना एवं जमाई का नाम जमाली था।

महावीर निर्भीक, साहसी, मातृ–पितृ भक्त एवं विनयशील थे। महावीर ने माता-पिता के देवलोकगमन के पश्चात् बड़े भाई नन्दिवर्धन से आज्ञा लेकर 30 वर्ष की उम्र में दीक्षा ली। साढ़े बारह वर्ष तक कठोर तपस्या करते हुए घोर उपसर्गों को सहन किया। भगवान को वैशाख शुक्ल दशमी को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। भगवान के शासन में 11 गणधर, 14,000 साधु, 36,000 साध्वियाँ, 1,59,000 श्रावक, 3,18,000 श्राविकाएँ थी। भगवान 72 वर्ष की आयु में कार्तिक अमावस्या (दीपावली) को पावापुरी में निर्वाण को प्राप्त हुए। भगवान के जीवन सन्दर्भित कुछ प्रेरक प्रसंग निम्नानुसार हैं –

भगवान महावीर की विवेकशीलता

भगवान महावीर में अनुकम्पा का गुण कूट–कूट कर भरा था। जब वे गर्भ में थे, तब उन्होंने सोचा कि मेरे हिलने–डुलने से मेरी माता को कष्ट होता है, अतः हिलना–डुलना बन्द कर दूँ। उन्होंने अपना हिलना–डुलना बन्द कर दिया। गर्भ का हिलना–डुलना बन्द हो जाने से माता को चिन्ता हुई कि मेरे गर्भस्थ बालक को क्या हो गया ? इस चिन्ता से खाना–पीना बन्द कर दिया और दिन–प्रतिदिन दुबली होने लगी। भगवान महावीर ने अपने अवधिज्ञान से देखा तो मालूम हुआ कि मेरे हिलना–डुलना बन्द कर देने से माता को अधिक चिन्ता व्याप्त हो गई है। अतः उन्होंने पुनः हिलना–डुलना चालू कर दिया, जिससे उनकी माता प्रसन्न हो गई। भगवान ने गर्भ में ही यह प्रतिज्ञा की कि जब तक माता–पिता जीवित रहेंगे, मैं उनके दिल को दुःखा कर दीक्षा नहीं लूंगा।

इसका यह मतलब नहीं कि दीक्षा लेना बुरा है। यदि पुण्य योग से किसी की

भावना दीक्षा लेने की हो जाय तो बड़ी ही नम्रतापूर्वक माता–पिता तथा बड़ों को समझाकर दीक्षा के लिए अनुमति प्राप्त कर दीक्षा लेनी चाहिए, जैसे एवन्ता मुनि, गजसुकुमाल मुनि और जम्बूकुमार ने अपने माता–पिता को समझा कर दीक्षा अंगीकार की और मोक्ष में पधारे।

भगवान महावीर की विनयशीलता

भगवान महावीर जब आठ वर्ष के हो गए, तब उनके माता–पिता ने कलाचार्य के पास उन्हें पढ़ने के लिए भेजा।

भगवान महावीर की बुद्धि बहुत ही तीव्र थी। विद्याचार्य जी जिस समय भगवान को पढ़ा रहे थे, उस समय इन्द्र पंडित के रूप में आकर विद्याचार्य से गहन और तात्विक प्रश्न पूछने लगा। इन्द्र के प्रश्न सुनकर विद्याचार्य अवाक् हो गए। आचार्य के भावों को जानकर भगवान् ने बड़ी नम्रतापूर्वक अनुमति मांगी कि क्या इन प्रश्नों का उत्तर मैं दे दूँ ?

शिक्षक की अनुमति प्राप्त कर भगवान महावीर ने इन्द्र के प्रश्नों का उत्तर सुन्दरता एवं शीघ्रता से दिया, जिसे सुनकर विद्याचार्य जी चकित रह गए।

तब पंडित रूपधारी शकेन्द्र द्वारा भगवान् के भावी तीर्थंकर होने तथा जन्म से ही अवधिज्ञानी होने का बोध कराया गया। तब विद्याचार्यजी ने बड़े ही सम्मानपूर्वक राजकुमार वर्द्धमान को माता–पिता के पास पहुंचा कर कहा कि आपका बालक तो स्वयं बुद्धिमान है, इसे पढ़ाने की योग्यता मुझ में नहीं है।

इतने बुद्धिशाली भगवान महावीर ने भी इन्द्र के प्रश्नों का उत्तर देने के लिए विद्याचार्यजी से भी आज्ञा मांगी। भगवान् महावीर कितने विनयशील थे।

साहस परीक्षा

जब महावीर कुछ कम आठ वर्ष के थे, अपने समवयस्क राजपुत्रों के साथ क्रीड़ा करते हुए उद्यान में ग़ए और संकुली नामक खेल खेलने लगे। उधर शकेन्द्र ने देव सभा में कहा कि अभी भरत क्षेत्र में बालक वर्द्धमान ऐसे धीर, वीर और साहसी हैं कि कोई देव–दानव भी उन्हें पराजित नहीं कर सकता। इन्द्र की बात का और तो सभी देवों ने आदर किया, परन्तु एक देव ने विश्वास नहीं किया। वह परीक्षा करने के लिए चला और उद्यान में जा पहुँचा। उस समय बालकों में वृक्ष को स्पर्श करने की होड़ लगी हुई थी। देव ने भयानक सर्प का रूप बनाया और उस वृक्ष के तने पर लिपट गया। फिर फन फैलाकर फुफ्कार करने लगा। एक भयानक

विषधर को आक्रमण करने में तत्पर देखकर, डर के मारे अन्य सभी बालक भाग गए। महावीर तो जन्मजात निर्भय थे। उन्होंने साथियों को धैर्य बँधाया और स्वयं सर्प के निकट जाकर और रस्सी के समान पकड़कर दूर ले जाकर छोड़ दिया।

अब वृक्ष पर चढ़ने की स्पर्धा प्रारम्भ हुई। शर्त यह थी कि विजयी राजपुत्र, पराजित की पीठ पर सवार होकर, निर्धारित स्थान पर पहुँचे। वह देव भी एक राजपुत्र का रूप धारण कर उस खेल में सम्मिलित हो गया। महावीर सबसे पहले वृक्ष के अग्रभाग पर पहुँच गए और अन्य राजकुमार बीच में ही रह गए। देव को तो पराजित होना ही था, वह सब से नीचे रहा। विजयी महावीर उन पराजित कुमारों की पीठ पर सवार हुए। अन्त में देव की बारी आई। वह देव हाथ–पाँव भूमि पर टिका कर घोड़े जैसे हो गया। महावीर उसकी पीठ पर चढ़ कर बैठ गए। देव ने अपना रूप बढ़ाया। वह बढ़ता ही गया, एक महान पर्वत से भी अधिक ऊँचा उसके सभी अंग बढ़कर विकराल बन गए। मुँह पाताल जैसा एक महान खड्डा, उसमें तक्षक नाग जैसी लपलपाती हुई जिह्वा, मस्तक के बाल पीले और खीले जैसे खड़े हुए, उसकी दाड़ें करवत के दाँतों के समान तेज, आँखें अंगारों से भरी हुई सिगड़ी के समान जाज्वल्यमान और नासिका के छेद पर्वत की गुफा के समान दिखाई देने लगे। उसकी भृकुटी सर्पिणी के समान थी। वह भयानक रूपधारी देव बढ़ता ही गया।

उसकी अप्रत्याशित विकरालता देखकर महावीर ने ज्ञानोपयोग लगाया। वे समझ गए कि यह मनुष्य नहीं , देव है और मेरी परीक्षा के लिए ही मानवपुत्र बनकर मेरा वाहन बना है। उन्होंने उसकी पीठ पर मुष्टि प्रहार किया, जिससे देव का बढ़ा हुआ रूप तत्काल वामन जैसा छोटा हो गया। देव को इन्द्र की बात का विश्वास हो गया। उसने महावीर से क्षमा याचना की और नमस्कार करके चला गया।

भगवान महावीर की सहनशीलता

(क) एक समय की बात है भगवान महावीर जंगल में ध्यान लगाकर खड़े थे। चारों तरफ सुनसान वन था। उस समय एक ग्वाला अपने बैलों को चराते हुए वहाँ आया। उसने भगवान महावीर से कहा– बाबाजी! मेरे बैल यहाँ चर रहे हैं, जरा देखते रहना, कहीं चले न जाये। यह कह कर वह अपना काम करने चला गया। भगवान महावीर ध्यान में थे, इसलिए उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। कुछ समय बाद जब वह ग्वाला वापस आया तो बैल वहाँ दिखाई नहीं दिये। वे चरते हुए आगे निकल गए थे। अपने बैलों को वहाँ न देखकर ग्वाला आग–बबूला हो गया। उसने

भगवान् से कहा- अरे धूर्त! मेरे बैलों को छिपाकर यह ढोंग क्यों कर रहा है? बता, मेरे बैल कहां हैं ? भगवन् तो ध्यान में थे। उन्होंने कुछ भी नहीं कहा। ग्वाले ने सोचा, मेरे बैलों को छिपाने वाला यही है। अब पूछने पर बोलता भी नहीं है इसलिए उसने क्रोध में आकर भगवान को खूब मारा–पीटा। फिर भी भगवान पर्वत के समान अचल खड़े रहे। वे अपने ध्यान से विचलित नहीं हुए।

जब देवलोक के इन्द्र ने अपने ज्ञान द्वारा यह सब देखा तो उन्हें बहुत दुःख हुआ। वे भगवान महावीर के सामने उपस्थित हुए और ग्वाले को दण्ड देने के लिए तैयार हुए, किन्तु करुणासागर भगवान ने उसे दण्ड देने से इन्द्र को मना कर दिया। तब इन्द्र ने भगवान से कहा भगवन् ! मैं आपके साथ रहना चाहता हूँ। मेरे साथ रहने से आपको इस प्रकार कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा।

भगवान ने उत्तर दिया – इन्द्र ! मुझे ग्वाले की मार से तनिक भी दुःख नहीं हुआ है, मुझे दुःख तो इस बात का है कि उस बेचारे ने अज्ञानवश अपने कर्म बाँध लिये हैं। तुम श्रद्धावश मेरे साथ रहने की बात कह रहे हो, परन्तु किसी की सहायता से मुझे सिद्धि नहीं मिल सकती। मैंने जैसे कर्म बाँधे हैं, उन्हें तो मुझे ही भोगना पड़ेगा। भोगे बिना उनसे छुटकारा नहीं मिल सकता। इसलिए मैं तुम्हारी सहायता नहीं चाहता हूँ। भगवान की निर्भय वाणी सुनकर इन्द्र को बड़ी खुशी हुई और वे उन्हें प्रणाम कर अपने स्थान को चले गए।

(ख)

एक बार भगवान महावीर विचरते हुए एक जगह कायोत्सर्ग कर रहे थे। उस समय त्रिपृष्ट वासुदेव के भव में जिस शय्या–रक्षक के कानों में उबला हुआ शीशा डलवाया था उस शय्या –रक्षक का जीव ग्वाला हुआ। भगवान को देख कर ग्वाले ने पूर्व भव के वैरानुबंधी कर्म के कारण क्रुद्ध होकर शरकट नामक कठिन वृक्ष की कीलें बनाकर उनके कानों में ठोक दी और किसी को दिखाई नहीं पड़े इसलिए उसने उन कीलों के बाहरी भाग काटकर बराबर कर दिये। भगवान ने इस वेदना को धैर्यपूर्वक सहा। कुछ समय के बाद विहार करते हुए भगवान पावापुरी पधारे। वहां सिद्धार्थ नामक वणिक् के घर खरक नामक वैद्य बैठा था। उसने भगवान की शूल पीड़ा को समझ लिया और सिद्धार्थ की प्रेरणा से वैद्य ने उन कीलों को युक्तिपूर्वक निकाल दिया। उसने उनके कानों के घाव औषध द्वारा बन्द कर दिए। इस प्रकार महावीर ने प्रसन्नतापूर्वक समभाव से उपसर्ग को मुक्ति मार्ग का सहयोगी माना।

(2) राजा मेघरथ

(अहिंसा व दया का महत्त्व)

बहुत पुराने जमाने की बात है। मेघरथ नामक एक राजा बड़े ही दयालू थे। वे किसी भी प्राणी को दुःखी देखते तो उनका हृदय दया से भर आता था। अपने प्राणों की भी परवाह न कर दूसरे प्राणियों की रक्षा करने में अपना धर्म समझते थे इसलिए उनके यश की महिमा इस लोक में ही नहीं, स्वर्गलोक में भी गाई जाने लगी। एक दिन स्वर्ग के राजा इन्द्र ने अपनी सभा में राजा मेघरथ का गुणगान किया, जिसे सुनकर दो देवताओं ने राजा की परीक्षा करनी चाही। उनमें से एक कबूतर बना और दूसरा बहेलिया। कबूतर उड़ता हुआ राजा की गोद में आकर बैठ गया। वह भय के मारे काँप रहा था। राजा ने उस पर हाथ फेरते हुए कहा डर मत, अब तुझे कोई नहीं मार सकेगा।

इतने ही में बहेलिया बना हुआ देव भी वहाँ पहुंचा और राजा से कहने लगा – ''यह कबूतर मेरा है। देखो, यह मेरा बाज पक्षी भी भूखा है। मैं इसी के लिए इसे पकड़ रहा था। आप इसे लौटा दीजिए।''

राजा ने कहा – ''भाई, अब तो यह मेरी शरण में आ गया है। इसकी रक्षा करना मेरा धर्म है। अब मैं तुम्हे यह कैसे दे सकता हूँ ? इसके बदले में तुम चाहो तो दूसरी कोई वस्तु मांग सकते हो।''

बहेलिया बोला – ''महाराज, यह अन्याय है। मेरी चीज मुझे मिलनी चाहिए। अगर यह कबूतर आप नहीं दे सकते तो किसी दूसरे प्राणी का कबूतर जितना ताजा मांस दिला दीजिए।''

राजा ने कहा– यह कैसे हो सकता है? इस कबूतर को बचाऊँ और दूसरे किसी पंचेन्द्रिय जीव को मारूँ ? और कुछ चाहते हो तो ले लो। दूसरे जीव को मार कर मैं तुम्हे मांस नहीं दे सकता। दूसरे जीव को मारना तो सबसे बड़ा पाप है, अगर तुम्हें मांस ही लेना है तो मैं तुम्हें अपना मांस दे सकता हूँ।

बहेलिये ने कहा – महाराज, आप क्या कह रहे हैं? कबूतर के बदले आप अपना मांस देना चाह रहे हैं ? तनिक सोच–विचार कर काम कीजिए। कहीं ऐसा न हो कि एक साधारण प्राणी के पीछे आप अपना अहित कर बैठें।

राजा ने कहा– शरण में आए हुए की रक्षा करना मेरा धर्म है। अपने धर्म का पालन करने में विलम्ब नहीं होना चाहिए। राजा ने तत्क्षण एक बड़ा तराजू मंगाया। तराजू के एक पलड़े में कबूतर और दूसरे पलड़े में अपनी जाँघ का मांस काट–

काट कर रखने लगे। राजा ने अपने पैर का मांस काट कर पलड़े में रख दिया परन्तु वह कबूतर के बराबर नहीं हुआ। देव माया से कबूतर का पलड़ा भारी ही बना रहा। राजा मेघरथ भी पीछे हटने वाले वीर नहीं थे। अब उन्होंने देखा कि मांस वाला पलड़ा झुकता नहीं है तो स्वयं उठकर तराजू में जा बैठे। बस फिर क्या था ? देवताओं की परीक्षा पूरी हुई। आकाश से पुष्प वर्षा होने लगी और जय–जयकार से वायु मंडल गूंज उठा। कबूतर और बहेलिया देव रूप में प्रकट हुए और राजा की प्रशंसा करते हुए क्षमा मांगने लगे। राजा का शरीर भी पहले की तरह पूर्ण स्वस्थ हो गया।

जैन धर्म का पहला व्रत अहिंसा है। इसका पालन मेघरथ राजा ने किया तो आगे चलकर ये जैनधर्म के 16 वें तीर्थंकर श्री शांतिनाथ जी हुए। दया का फल कितना महान् है। दया के प्रभाव से तीर्थंकर जैसा महान् पद मिलता है, जिनके चरणों में स्वर्ग के इन्द्र भी मस्तक झुकाते हैं।

(3) अल्प – परिग्रही पूणिया श्रावक

धर्माचरण का पाँचवाँ नियम अपरिग्रह है। गृहस्थ पूर्णतया अपरिग्रह का पालन नहीं कर सकता लेकिन वह अपनी इच्छा और आवश्यकताओं को सीमित कर संतोष के साथ जीवन बीता सकता है। इस सम्बन्ध में पूणिया श्रावक की कथा बड़ी प्रसिद्ध है।

एक बार राजा श्रेणिक भगवान महावीर का उपदेश सुन रहे थे। उपदेश सुन लेने के बाद राजा ने भगवान से पूछा – भगवन् ! मैं मरकर कहाँ जाऊँगा ? भगवान सर्वज्ञ और सर्वदर्शी थे। उन्होंने उत्तर दिया तुम यहाँ से मरकर नरक में उत्पन्न होओगे। तुमने कुछ अच्छे कार्य भी किये हैं परन्तु उससे पूर्व ही तुम्हारा नरक का आयुष्य बन्ध चुका है। तुमने जो अच्छे कार्य किये हैं, उनसे तुम भविष्य में प्रथम तीर्थंकर बनोगे।

नरक में जाने की बात सुनकर राजा घबरा गया। कहा – भगवन् ! कोई ऐसा उपाय है, जिससे मेरा नरक में जाना रुक सकता हो ? भगवान ने कहा, इन चार कार्यों में से एक भी कार्य कर सको तो तुम्हारा नरक में जाना रुक सकता है। वे चार कार्य इस प्रकार हैं – (1) तुम्हारी दासी कपिला से दान दिलाना, (2) नवकारसी पच्चक्खाण का पालन करना, (3) कालिया कसाई से पशु वध बंद कराना और (4) पूणिया श्रावक की सामायिक मोल लेना।

राजा उपर्युक्त तीन बातों में असफल हो गया तो वह स्वयं पूणिया श्रावक के घर जा पहुँचा। पूणिया श्रावक भगवान महावीर के परम भक्त थे। उनका जीवन

बहुत ही सीधा–सादा था। वे प्रतिदिन बारह आने की रूई की पूणिया लाते और उसका सूत बनाया करते थे। उसको बेचकर जो पारिश्रमिक मिलता, उसी से वे अपने कुटुम्ब का भरण–पोषण करते थे। सूत कातने के बाद जो समय मिलता, उसमें वे सामायिक किया करते थे। मन में किसी प्रकार की आकांक्षाएं नहीं थीं। अपने घर में राजा को देख कर पूणिया श्रावक खड़े हो गए और बड़े आदर के साथ कहा राजन्! आज का दिन धन्य है, आप मेरे घर पधारे! मैं सेवा में हाजिर हूँ। फरमाइये, मेरे योग्य क्या सेवा है? पूणिया के शांत जीवन और सरल प्रकृति को देख कर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। राजा ने कहा– श्रावक जी! मैं आपके पास किसी विशिष्ट कार्य के लिए आया हूँ, आशा है, आप मेरी मांग स्वीकार करेंगे।

पूणिया ने कहा– राजन्! मुझ अकिंचन के पास ऐसी क्या वस्तु है, जो मैं आपको देकर कृतार्थ हो सकूँ? फरमाइये, क्या आज्ञा है?

राजा ने कहा कि मैं भगवान महावीर के पास गया था। उन्होंने मुझे चार उपाय बताये, जिनसे मेरा नरक में जाना रुक सकता है। उनमें से मैंने तीन उपाय तो कर लिये, जिनमें मैं सफल न हो सका। अब केवल आपका ही सहारा है। अगर आप मेरे सहायक बन सकें तो मुझे नरक के महान् कष्टों से छुटकारा मिल सकता है।

पूणिया जी ने उत्तर दिया – राजन्! विलम्ब मत कीजिये। मैं अपना सर्वस्व आपके लिए न्यौछावर कर सकता हूँ।

राजा ने कहा– और कुछ नहीं मुझे केवल आपकी एक सामायिक चाहिए। उसकी जो भी कीमत लेना चाहें, मैं देने को तैयार हूँ। उससे मेरा नरक टल सकता है।

राजा की बात सुनकर पूणिया जी विचार–मग्न हो गए। कुछ देर बाद उन्होंने कहा – राजन्! जहाँ तक मैं धर्म का स्वरूप समझ सका हूँ सामायिक कोई लेन–देन या खरीदने की वस्तु नहीं है। वह तो आत्मा की एक आध्यात्मिक अनुभूति है, जो प्रत्येक व्यक्ति अपने में अनुभव कर सकता है। आप उसे खरीदना चाहते हैं तो मैं देने को तैयार हूँ। परन्तु उसका मूल्य क्या होगा, यह मुझे भी ज्ञात नहीं है। यदि भगवान् महावीर ने मेरी सामायिक खरीदने की बात कही है तो उसका मूल्य भी आप उन्हीं से पूछ कर आइये। वे जितना भी मूल्य बतायेंगे। उतने में मैं आपको सामायिक बेच दूंगा।

राजा श्रेणिक नरक के दुःखों से भयभीत थे। वे हर उपाय से उससे बचना

चाहते थे। वे भगवान महावीर की सेवा में पुनः उपस्थित हुए और पूणिया जी की एक सामायिक का मूल्य पूछने लगे।

भगवान ने कहा- राजन् ! तुम सामायिक को खरीदना चाहते हो, परन्तु तुम्हारे पास जो धन सम्पत्ति है, वह सब एक सामायिक की दलाली के लिए भी पर्याप्त नहीं है। जब दलाली भी पूरी नहीं बनती है तो मूल्य की बात तो बहुत दूर है। वह तुम कैसे चुका सकोगे? सामायिक का मूल्यांकन भौतिक सम्पत्ति के साथ नहीं किया जा सकता है। वह तो आत्मा की शुद्ध अनुभूति है। उससे आत्मा में समभाव पैदा होता है। पूणिया श्रावक इतना अल्प परिग्रही है कि वह सामायिक व्रत में अपने मन को एकाग्र और शुद्ध रख सकता है। उदरपूर्ति के लिए वह चरखा चलाता है और शेष समय में सामायिक की आराधना करता है।

भगवान महावीर का उत्तर सुनकर राजा श्रेणिक निराश हो गया। लेकिन यह तत्त्व उसकी समझ में आ गया कि धर्म क्रिया खरीदने की वस्तु नहीं है। वह तो अनमोल है, जिसका आचरण द्वारा अनुभव किया जा सकता है।

सुख परिग्रह में नहीं, सन्तोष में है। पूणिया श्रावक कितने अल्प–परिग्रही थे इसलिए वे परम सुखी थे। अपनी इच्छाओं को कम करते जाना ही अपरिग्रह की साधना में आगे बढ़ना है।

卐

काव्य विभाग

(1) मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निःस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, जिन, हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहें ।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहे ॥1॥

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्य–भाव धन रखते हैं ।
निज–पर के हित–साधन में जो, निश–दिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ–त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दु :ख समूह को हरते हैं ॥2॥

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ ।
परधन–वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ ॥3॥

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ ॥
बने जहाँ तक इस जीवन में , औरों का उपकार करूँ ।।4॥

मैत्री–भाव जगत में मेरा, सब जीवों पर नित्य रहे ।
दीन–दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्त्रोत बहे ॥
दुर्जन क्रूर– कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे ।
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥5॥

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं , द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण–ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥6॥

कोई बुरा कहे या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊँ, या मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा भी भय, या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय–मार्ग से मेरा, कभी न पग डिगने पावे ॥7॥

होकर सुख में मग्न न फूलें , दुःख में कभी न घबरावें ।
पर्वत–नदी–श्मशान–भयानक, अटवी से नहीं भय खावें ॥
रहे अडोल अकम्प निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट–वियोग अनिष्ट–योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥8॥

सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे ।
वैर पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नए मंगल गावे ॥
घर–घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत–दुष्कर हो जावें ।
ज्ञान–चरित्र उन्नत कर अपना, मनुज–जन्म फल सब पावें ॥9॥

ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥
रोग, मरी, दुर्भिक्ष न फैले , प्रजा शान्ति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्वहित किया करे ॥10॥

फैले प्रेम परस्पर जग में , मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे ॥
बन कर सब 'युग वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करे ।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुःख संकट सहा करे ।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, निज आनन्द में रमा करें ॥ 11 ॥

(जुगल किशोर मुख्तियार) (युगवीर)

(2) महामन्त्र – नवकार प्रार्थना

नवकार मन्त्र है महामन्त्र, इस मन्त्र की महिमा भारी है ।
आगम में कही, गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी है । टेर ।
अरिहंताणं पद पहला है, अरि आरति दूर भगाता है ।

सिद्धाणं सुमिरन करने से, मन इच्छित सिद्धि पाता है ।
आयरियाणं तो अष्ट सिद्धि और नव निधि के भण्डारी है। नव.।
उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर हर, ज्ञान प्रकाश फैलाता है।
सव्वसाहूणं सब सुखदाता, तन मन को स्वस्थ बनाता है ।
पद पाँच के सुमिरन करने से, मिट जाती सकल बीमारी है। नव. ।
श्रीपाल सुदर्शन मेणरया, जिसने भी जपा आनन्द पाया ।
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया ।
मन नन्दनवन में रमण करे, यह ऐसा मंगलकारी है । नव.।
नित नई बधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती ।
'अशोक मुनि' जय विजय मिले, शांति प्रसन्नता बढ़ जाती ।
सम्मान मिले, सत्कार मिले, भव–जल से नैया तारी है ।नव.।

(3) श्री महावीर स्वामी की...

श्री महावीर स्वामी की, सदा जय हो, सदा जय हो,
पवित्र पावन जिनेश्वर की, सदा जय हो सदा जय हो।
तुम्हीं हो देव देवन के, तुम्ही हो पीर-पैगम्बर,
तुम्हीं ब्रह्मा, तुम्हीं विष्णु, सदा जय हो...
तुम्हारे ज्ञान-खजाने की, महिमा बहुत भारी है,
लुटाने से बढ़े हरदम, सदा जय हो...
तुम्हारी ध्यान मुद्रा से, अलौकिक शान्ति झरती है,
सिंह भी गोद पर सोते, सदा जय हो...
तुम्हारा नाम लेने से जागती वीरता भारी,
हटाते कर्म लश्कर को, सदा जय हो....
तुम्हारा संघ सदा जय हो, मुनि मोतीलाल सदा जय हो
जवाहरलाल पूज्य गुरुराज, सदा जय हो।

(4) अच्छा बच्चा

जो न किसी का हृदय दुखाता, वह अच्छा बच्चा कहलाता।
जो झगड़ों में नहीं उलझता। झूठ बोलना पाप समझता।
अपने मन में पाप से डरता, नहीं काम मनमाना करता।
सुख से विद्या पढ़ने जाता, वह अच्छा बच्चा कहलाता॥
दया दिखाने में सुख माने, माता–पिता की आज्ञा माने।
नहीं करेगा पाप कभी वह, क्या देगा संताप कभी वह।
वीर प्रभु का जो गुण गाता, वह अच्छा बच्चा कहलाता॥

वीर–वन्दना

हे प्रभुवीर दया के सागर।
सब गुण आगर ज्ञान उजागर।
जब तक जीऊं हँस-हँस जीऊं।
ज्ञान सुधारस अमृत पीऊं।
छोड़ु लोभ घमण्ड बुराई।
चाहूँ सबकी नित्य भलाई।
जो करना वो अच्छा करना।
फिर दुनिया में किससे डरना।
हे प्रभु मेरा मन हो सुन्दर।
वाणी सुन्दर जीवन सुन्दर।

सामान्य ज्ञान विभाग

(1) श्रावक के तीन मनोरथ

दोहा – आरंभ परिग्रह अल्प हो, महाव्रत हो स्वीकार।
संथारा हो अंत में, तीन मनोरथ सार॥

1. अहो भगवन्! वह दिन मेरा धन्य एवं परम कल्याणकारी होगा, जिस दिन मैं आरंभ परिग्रह का त्याग करूँगा।

2. अहो भगवन्! वह दिन मेरा धन्य एवं परम कल्याणकारी होगा, जिस दिन मैं मुण्डित होकर पाँच महाव्रत को धारण करूँगा।

3. अहो भगवन्। वह दिन मेरा धन्य एवं परम कल्याणकारी होगा, जब मैं 18 पाप और चारों आहार का त्याग कर, सब जीवों से क्षमायाचना कर, अंतिम समय में संथारा सहित, समाधि मरण को प्राप्त करूँगा।

तीन मनोरथ ये कहे, जो ध्यावे नित्यमन।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिव सुख धन॥

(2) धर्म स्थान में प्रवेश के नियम–पाँच अभिगम

धर्म स्थान में प्रवेश करते समय हमें निम्न नियमों का पालन करना चाहिए, जिन्हें पांच अभिगम कहते हैं।

1. सचित वस्तु का त्याग– धर्म स्थान में प्रवेश करते समय हरी वनस्पति, इलाइची, दाख, बादाम, फल–फूल, बीज, अनाज, कच्चा पानी, नमक, टार्च, सेल की घड़ी, मोबाइल, आदि को साथ नहीं ले जाना चाहिए।

2. अचित वस्तु का विवेक – अभिमान सूचक वस्तुएं छत्र, चामर, जूते, लाठी, टोपी, वाहन, शस्त्र आदि एक तरफ रखकर प्रवेश करना चाहिए।

3. उत्तरासन धारण – दुपट्टा, रुमाल अथवा मुखवस्त्रिका को मुँह पर धारण करना चाहिए, धर्मस्थान में किसी से भी खुले मुँह वार्तालाप नहीं करना चाहिए।

4. वन्दन – धर्मस्थान में प्रवेश करते ही सन्त सतियाँजी म.सा. दृष्टि में आएं तो दोनों हाथ जोड़कर विनयपूर्वक आगे बढ़ना चाहिए फिर साधु–साध्वियों के न अति नजदीक, न अति दूर उचित एवं योग्य स्थान पर अर्थात् उनसे साढ़े तीन हाथ दूर खड़े रहकर तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार विधिपूर्वक पंचांग नमाकर वन्दन करना और सुख–शान्ति पूछना चाहिए।

5. मन की एकाग्रता–गृहकार्य एवं व्यवसाय आदि के प्रपंच या पाप कार्यों से मन हटाकर मन को एकाग्र करके चारित्र आत्माओं के सानिध्य में प्रवचन श्रवण, तत्त्व चर्चा, स्वाध्याय आदि का लाभ उठाना चाहिए।

(3) श्रावक के चौदह नियम

(1) **सचित –** जीव सहित वस्तु अर्थात् कच्चा नमक, कच्चा पानी, फल, फूल, मूल, शाक, बीज आदि कोई भी सचित वस्तु जो छेदन–भेदन होकर तथा अग्नि आदि का शस्त्र पाकर अचित न हुई हो, उसका परिमाण करना।

(2) **द्रव्य –** रोटी, दाल, भात आदि जितनी चीजें दिनभर में खाने-पीने में आएँ उसकी जाति की मर्यादा करना।

(3) **विगय –** दूध, दही, घी, तेल, मिठाई ये पाँच विगय हैं। इनकी मर्यादा करना तथा मक्खन, शहद आदि महाविगय का त्याग करना।

(4) **उपानत् –** जूते, चप्पल आदि जोड़ी की मर्यादा, चमड़े का त्याग या मर्यादा।

(5) **ताम्बूल –** मुखवास पान– सुपारी आदि जाति की मर्यादा।

(6) **वस्त्र –** पहनने–ओढ़ने के सब वस्त्रों की मर्यादा।

(7) **कुसुम –** शौक से सूंघने की वस्तु–फूल, इत्र आदि की मर्यादा।

(8) **वाहन –** घोड़ा, हाथी, जहाज, मोटर साइकिल, तांगा आदि सवारी की मर्यादा।

(9) **शयन –** पलंग, खाट, बिछौने, कुर्सी आदि फर्नीचर की मर्यादा।

(10) **विलेपन –** चन्दन, तेल, उबटन, पाउडर, क्रीम आदि की मर्यादा।

(11) **ब्रह्मचर्य –** मैथुन, गन्दे चित्र, गन्दे साहित्य, टी.वी. का त्याग।

(12) **दिशा –** अपने स्थान से ऊंची, नीची, तिरछी दिशा का परिमाण। तार, चिट्ठी, टेलिफोन स्वयं करने की मर्यादा (कि.मी. आदि से)।

(13) **स्नान –** स्नान के जल का परिमाण। नदी, तालाब, समुद्र में स्नान का त्याग।

(14) **भत्त –** मिष्ठान, भोजन, दूध, फल आदि की मर्यादा।

सूचना – मर्यादित जीवन जीने के लिए जहाँ तक हो सके व्यक्ति को प्रतिदिन चौदह नियम ग्रहण करना चाहिए। ऊपर लिखित चौदह वस्तुओं की आवश्यकता के अनुसार जितनी मर्यादा (संख्या अथवा मात्रा में) रखनी हो, उसके उपरान्त त्याग करना चाहिए। स्पर्श का तथा भूल का आगार। जितना त्याग उतनी ही शान्ति। चौदह नियम धारण करने से समुद्र जितना पाप घट कर बूंद के बराबर रह जाता है।

(4) सुभाषित

1. अरिहन्त सिद्ध समरूं सदा, आचारज उवज्झाय।
   साधु सकल के चरण को, वन्दू शीश नमाय ॥
2. ज्ञान गरीबी गुरु वचन, नरम वचन निर्दोष ।
   इनको कभी न छोड़िये, श्रद्धा शील सन्तोष ॥
3. जापे जैसी वस्तु है, वैसी दे दिखलाय ।
   वांका बुरा न मानिये, वो लेन कहाँ से जाय ॥

4. तन से सेवा कीजिये, मन से भले विचार ।
धन से इस संसार में, कीजे पर उपकार ॥
5. चिड़ी चौंच भर ले गई, घटियो न नदियन नीर ।
दान दिये धन ना घटे, कह गए दास कबीर ॥
6. बुरा बुरा सबको कहूँ, बुरा न दीसे कोय ।
जो घट शोधूं आपणों, तो मासूं बुरा ना कोय ॥
7. बड़े बढ़ाई ना करे, बड़े न बोले बोल
हीरा मुख से ना कहे, लाख हमारा मोल ॥
8. सुख दिया सुख होता है, दुःख दिया दुःख होय ।
आप हणे नहीं अवर को तो, आपको हणे न कोय ॥
9. जैसा मीठा क्षीर सागर का पानी, वैसी मीठी जिनराज की वाणी ।
जो कोई सुणे वो उत्तम प्राणी, नहीं सुने जो मूढ़ अज्ञानी ॥
10. क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनय का नाश करता है ।
माया मित्रता का नाश करती है, लोभ सर्वनाश करता है ।

5. सामायिक का महत्व

जिससे आत्मा में सम भाव की प्राप्ति हो उसे सामायिक कहते हैं । वीतरागता का प्रथम सोपान सामायिक है-

लाख खंडी सोना तणी, लाख वर्ष दे दान ।
सामायिक तुल्य नहीं, भाख्यो श्री भगवान ॥

आर्त्त ध्यान और रौद्र ध्यान को त्याग कर सम्पूर्ण पापमय कार्यों से निवृत्त होना और एक मुहूर्त पर्यन्त मनोवृत्ति को समभाव में रखना सामायिक है । सामायिक मन को स्थिर रखने की अपूर्व क्रिया है । परम पद पाने का सरल एवं सुखद रास्ता है । दुःख समुद्र से तिरने का श्रेष्ठ जहाज है । बून्द–बून्द से घड़े भरने के समान एक सामायिक प्रतिदिन करने वालों की एक महीने में एक अहोरात्रि और बारह महीने में बारह अहोरात्रि (दिन-रात) धर्म ध्यान में व्यतीत होती है । सामायिक में 84 लाख जीवयोनि को अभय दान दिया जाता है । सब दानों में अभय दान श्रेष्ठ है । एक शुद्ध सामायिक की दलाली में 52 डूंगरी (पर्वत) धन कम पड़ता है ।

छोटे–छोटे स्वार्थों की पूर्ति एवं नश्वर पदार्थों की प्राप्ति में हम घन्टों पूर्ण कर देते हैं । हम क्षणिक सुखों के लिए तो मानव भव के महत्वपूर्ण फल गवाँ देते हैं किन्तु शाश्वत सुख (आत्मिक सुख) के लिए हम कितना समय देते हैं ? अतः प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन कम से कम एक सामायिक तो अवश्य करना चाहिए ।

सामायिक इस जीवन को समता–मय बनाने की साधना है एवं संसार सागर से तिरने का श्रेष्ठ उपाय है ।

3) माया को संतोष से जीतो।

4) लोभ को नम्रता से जीतो।

5) प्रत्याख्यान लेते समय दो तथा पालते समय एक लोगस्स का ध्यान करते हैं।

तत्त्व विभाग – 25

प्रश्न 1. सही विकल्प चुनकर दिये गये ( ) स्थान पर लिखो। 20

1) 9 वें तीर्थंकर का नाम (_____)
   1) शीतलनाथजी 2) सुविधिनाथजी
   3) अरनाथजी 4) सुमतिनाथजी

2) 5 वीं सतीजी का नाम (_____)
   1) सीताजी 2) कुंतीजी 3) सुलसाजी 4) सुंदरीजी

3) धर्म के समान नहीं है। (_____)
   1) अमृत 2) सुख 3) शरण 4) मित्र

4) सभी रोगों का मूल (_____)
   1) शरीर 2) अजीर्ण 3) लोभ 4) हंसी

5) 10 वें श्रावकजी का नाम (_____)
   1) महाशतकजी 2) सुरादेवजी
   3) सालिही पिताजी 4) कामदेवजी

6) बाल ब्रह्मचारिणी सतीजी (_____)
   1) सुलसाजी 2) सुन्दरीजी
   3) सुभद्राजी 4) शिवादेवीजी

7) चेतना रहित जड़ पदार्थ है (_____)
   1) पाप 2) अजीव 3) आश्रव 4) मोक्ष

8) बड़ों के सामने सदा कैसे बैठो। (_____)
   1) सीधे 2) पद्मासन में 3) नम्र होकर 4) अकड़कर

9) भगवान ऋषभदेवजी का दूसरा नाम (_____)
   1) अतिवीरजी 2) सन्मतिजी
   3) आदिनाथजी 4) वर्धमान जी

10) चेलना सतीजी का दूसरा नाम (________________)

1) सुलसाजी 2) सुभद्राजी 3) पुष्पचूलाजी 4) सीताजी

प्रश्न 2.पुण्य तत्व को परिभाषित कीजिए। (दो पंक्ति) 2

उत्तर ____

प्रश्न 3.संवर तत्व को परिभाषित कीजिए। (तीन पंक्ति) 3

उत्तर ____

कथा विभाग – 10

प्रश्न 1.सही (✓)व गलत (✗)बताइये। 10

1) भ. महावीर ने चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को केवल ज्ञान प्राप्त किया।( )
2) मेघरथ राजा का जीव 16 वां तीर्थंकर बनें। ( )
3) धर्माचरण का पाँचवां नियम अप्रमाद है। ( )
4) भगवान महावीर के शासन में चौदह गणधर थे। ( )
5) मेघरथ का गुणगान सुन देवता उन्हें डराने के लिये गये थे। ( )
6) राजा श्रेणिक को भगवान ने नरक न जाने के लिये चार कार्य करने को कहा। ( )
7) राजा श्रेणिक ने पूणिया श्रावक की सामायिक खरीद ली थी। ( )
8) मरकट वृक्ष की लकड़ी की कीलें बनाकर, ग्वाले ने भगवान के कानों में ठोंक दी। ( )
9) भगवान महावीर ने 28 वर्ष की उम्र में दीक्षा ली थी। ( )
10) राजा मेघरथ की कहानी से अहिंसा व दया का महत्व समझ में आता है। ( )

काव्य विभाग – 15

प्रश्न 1.निम्न काव्यांशों को पूर्ण करो। 15

1) अहंकार का भाव न रक्खूं, ________________

________________, कभी न ईर्ष्या भाव धरूं।

2) ________________, ________________

जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिलें सौरभ छाया।

3) ________________, तुम्हीं हो पीर पैगम्बर।

________________, सदा जय हो सदा जय हो।

4) अपने मन में पाप से डरता, ________________

________________, वह अच्छा बच्चा कहलाता।

5) होकर सुख में मग्न न फूलें, _____
_____, अटवी से नहीं भय खावें।

सामान्य ज्ञान विभाग – 15

प्रश्न 1.सही जोड़ी बनाइये। बनाकर नीचे रिक्त स्थान पर लिखें। 5

1)	ताम्बूल	–	फल–फूल
2)	विलेपन	–	भोजन–दूध
3)	सचित	–	मुखवास
4)	अचित	–	चंदन, तेल
5)	भत्त	–	धोवन पानी
1)	_____	–	_____
2)	_____	–	_____
3)	_____	–	_____
4)	_____	–	_____
5)	_____	–	_____

प्रश्न 2.सही विकल्प चुनकर लिखो। 5

1) मैं आरंभ परिग्रह का त्याग करूंगा यह कहाँ से लिया गया है। (.....)
   1) तीन मनोरथ 2) पौंच अभिगम
   3) चौदह नियम 4) इनमें से कोई नहीं
2) वीतरागता का प्रथम सोपान है। (.....)
   1) सामायिक 2) अभिगम 3) प्रत्याख्यान 4) पोरसी
3) मान नाश करता है। (.....)
   1) प्रीति का 2) लोभ का 3) विनय का 4) मित्रता का
4) इनको कभी नहीं छोड़ना चाहिए। (.....)
   1) श्रद्धा, शील 2) बढ़ाई करना
   3) देश 4) इनमें से कोई नहीं
5) शुद्ध सामायिक की दलाली में कितना धन कम पड़ता है। (.....)
   1) 27 डुंगरी 2) 42 डुंगरी 3) 52 डुंगरी 4) 62 डुंगरी

प्रश्न 3.सुभाषित के निम्न दोहे पूर्ण करो। 5

1) जैसा मीठा क्षीर सागर का पानी, _____
   जो कोई सुणे वो उत्तम प्राणी, _____
2) _____, मान विनय का नाश करता है।
   माया मित्रता का नाश करती है, _____